कुमाऊँ के प्रमुख लोक वाद्य यंत्र एवं लोक गायन परंपरा और संस्कृति संरक्षण में उनका योगदान

गजदीप कुमार आर्या
शोध छात्र इतिहास विभाग,
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय बागेश्वर
(उत्तराखण्ड)

कुमाऊँ में वाद्य यंत्रों का बड़ा महत्व है, इनके प्रयोग से कुमाऊँवासी मनोरंजन के साथ–साथ धार्मिक कार्यों को भी संपादित करते हैं, शादी, ब्याह, नामकरण, सोलह संस्कार, जन्मदिन, तीज त्यौहार मेले, कौतिक धार्मिक राजजात यात्रायें देवताओं का आवाहन जागर आदि सभी में इनकी महत्वपूर्ण भूमिका रही है, कुमाऊँ में प्राचीन काल से ही चले आ रहे वाद्य यंत्रों का स्थान अब आधुनिक वाद्य यंत्रों ने ले लिया है लेकिन आज भी ये पुराने वाद्ययंत्र अपनी जीवंतता को बनाये हुए हैं कार्यक्रम विशेष में इनकी जगह कोई नहीं ले सकता, जागर में जब तक हुड़के का प्रयोग नहीं होगा तब तक देवता का अवतरण नहीं होता आज भी जन सामान्य में "दैवता बजन्तर की उक्ति हर घर में देखने को मिलती हैं"[1] कुमाऊँ की संस्कृति का इतिहास, गौरव, अतीत, परंपरा, त्याग, प्रेम, निष्ठा, समर्पण, आदि से भरी हुई है, इसके अर्न्तगत हमारे परंपरागत वाद्य यंत्रों का एक अति विशिष्ट स्थान है जिसे कोई नहीं ले सकता, इनका महत्व उतना ही है जितना हमारी सनातन संस्कृति का है, ये हमारी संस्कृति के प्राण हैं, इसी संदर्भ में हम कुछ वाद्य यंत्रों का वर्णन करेंगे जो कुमाऊँनी संस्कृति को अपने में पूर्णरूप से समाहित किये हुए हैं।

(1) हुड्डका –

"यह कुमाऊँ का प्राचीन वाद्ययंत्र है इसका प्रयोग कुमाऊँ में जागरों में किया जाता है"[2] यह भगवान शंकर का भी वाद्य यंत्र है लोक जागरों में ऐसी जनश्रुति है कि "जब डंगरियाँ हुड्डके को बजाकर देवताओं का आवाहन करते हैं तो देवता हुड्डके की थाप पर मंत्रमुग्ध हो जाते हैं"[3] तथा उनको आना ही पड़ता है, इसका मुख्य भाग लकड़ी और कहीं कहीं पर ताँबे का बना होता है, इसकों अन्दर से कटोर कर खोखला कर दिया जाता है, इसके दोनों ओर के सिरे बकरे की आमाश्य की झिल्ली से मढ़कर आपस में एक दूसरे को डोरी से कस दिया जाता है, इस भाग को कुमाऊँनी भाषा में "नाइ" कहा जाता है और आमाशय की झिल्ली से मढ़कर बने वस्तु को "पुड़ा" कहते हैं, इसको बजाते समय कंधे में लटकाने के लिए इसके बीच का भाग कपड़े या डोरी से बांध दिया जाता है, जब इसको बजाया जाता है, तो कपड़े पट्टी का खिंचवा हुड्डके के पुड़ा व डोरी पर पड़ता है, जिससे उसकी आवाज संतुलित हो जाती है, आवाज का संतुलन एवं हुड़के की पुड़ी पर थाप की लय पर बजाने वाले डंगरिये को विशेष ध्यान रखना पड़ता हैं। यह जागर में बजने वाला मुख्य वाद्य यंत्र है इसके सहायक हिस्से कांसे की थाली और "हयोव लगाने वाले सहायक डंगरिये होते हैं"[4]

(2) दमाई / दमू / दमुवा–

"यह दो प्रकार के होते हैं जो आकार प्रकार में छोटे होते हैं इन्हें ढोल नगाड़ों के सहायक के रूप में बजाया जाता है"[5] इसके निर्माण में ताँबे का प्रयोग किया जाता है, इसके मुंह को भैंस की खाल से मढ़ा जाता है अधोभाग अष्टधातु से निर्मित किया जाता इसलिए इसे अत्यधिक शुद्ध माना जाता है, इसके पुड़ों को भी जानवरों की आंतों से कसा जाता है, जो स्थाई होते हैं इसको दो लकड़ियों के सेटे से बजाया जाता है, "इसमें से कानों को चीरने वाली तीव्र क्यान–क्यान की आवाज निकलती है"[6] ढोल के साथ 22 तरह के बाजे को बजाने में प्रमुख सहायक वाद्य यंत्र है, जब तक इसको ढोल के साथ ना बजाया जाए तब तक ढोल की आवाज में रस नहीं आ पाता, प्राचीनकाल में दमाई को मढ़ने का कार्य "डौनी" करते थे, जो इसे भैंस की खाल का बनाते थे, "वर्तमान में इसमें अजखाल का प्रयोग बहुतायत में होने लगा है"[7]

(3) मशकबीन / बीन / पीपरी –

"कुमाऊँ में ऐसी मान्यता है कि यह एक विदेशी वाद्य यंत्र है लेकिन कुमाऊँ में इसे प्राचीन समय से ही बजाया जाता है"[8] यह कुमाऊँ की शान है शादी, विवाह धार्मिक उत्सवों जुलुसों, आदि में इसको बजाया जाता है इसको अंग्रेजी में "बैगपाइपर" भी कहते हैं इसमें चमड़े की थैली होती है इसमें चार छिद्र होते हैं, तीन पाईप ऊपर की ओर तथा एक पाईप नीचे की ओर जोड़ा जाता है, हवा भरने के लिए एक पाईप और होता है, इस पाईप में कोई छेद नहीं होता, इससे ही धुन निकलती है, "इस पाईप को चंडल कहा जाता है"[9] इससे काफी मधुर ध्वनि निकलती है कुमाऊँ रेजीमेंट में युद्ध के समय में भी इसका प्रयोग जवानों का उत्साह बढ़ाने के लिए किया जाता है।

(4) झांझर –

"इसका प्रयोग भी कुमाऊँ में सर्वत्र किया जाता है, शादी–विवाह धार्मिक उत्सवों में इसका प्रयोग ढोल दमाई के साथ किया जाता है"[10] मंदिरों में भी इसका प्रयोग पूजा–अर्चना और देव आराधना के अवसर पर किया जाता है, इसे बजाने में दोनों हाथों का प्रयोग किया जाता है, ये कांसे के होते हैं, इनका प्रयोग जोड़े में ही किया जाता है, इसका प्रयोग मंदिरों में जब विशेष कुल द्वारा सुख और दुःख दोनों अवसरों पर पूजा अराधना का कार्यक्रम किया जाता है तो ढोल के साथ नृत्य करते हुये इसे बजाया जाता है, देवता के अवतरित होने पर झोंझरा से अवतरित देवता को धूनी से बभूती दी जाती हैं।

(5) ढोल –

"कुमाऊँ में प्राचीनकाल से ही ढोल का बड़ा महत्व रहा है, स्थानीय लोक जागरों में जनश्रुति है कि ढोल की आवाज विजय का प्रतीक है"[11] कुमाऊँ के सभी मंदिरों में इसकी अनिवार्यता इसकी एतिहासिकता को प्रमाणित करती है, कुमाऊँ के पर्वतीय अंचलों में इसका प्रयोग बहुतायत में होता है, और यहाँ के मंदिरों में बिना ढोल के पूजा नही होती "भनार क्षेत्र में बंज्यैण देवता के विजय स्वरूप ढोल से आवाह्न किया जाता है"[12] ढोल का व्यास 14 से 16 इंच लम्बाई 16 से 21 इंच तक होता है, इसमें "अजखाल" का प्रयोग किया जाता है, हाथ और लकड़ी से दोनों ओर से बजाने के काम में आता है, ढोल द्वारा देवी देवताओं का जागरण का कार्य भी किया जाता है, इसी की थाप पर डंगरिये भी नाचते हैं।

(6) रणसिंग –

इस यंत्र को लेकर कुमाऊँ में मान्यता है कि "यह वीर रस को उत्पन्न करता है महाभारत काल से ही इस वाद्य यंत्र को रणभूमि पर बजाया जाता था"[13] तभी से इसका प्रचलन पूरे भारतवर्ष के साथ उत्तर भारत के क्षेत्रों में किया जाने लगा जिसमें कुमाऊँ भी शामिल है इसे फूंक मारकर बजाया जाता है, इसका व्यास फूंक मारने के स्थान पर कम होता है, धीरे–धीरे इसकी चौड़ाई में वृद्धि होती है, इससे निकलने वाला सुर विजय की ओर संकेत करता है पौराणिक काल में सुरों द्वारा असुरों की विजय पर यह बजाया जाता था, आज भी कुमाऊँ में शादी विवाहों, मांगलिक कार्यो एवं धार्मिक कार्यों में सर्वत्र इस वाद्य यंत्र को बजाया जाता है।

(7) भोंकर/भूकौंर –

यह तुरही के आकार का प्राचीन वाद्ययंत्र है, "यह ताँबे का बना होता है, इसकी लंबाई 3–6 मीटर होती है"[14] यह अंदर से खोखला होता है, इसे फूंकमार कर बजाया जाता है, जहाँ से इसे फूंक मारकर बजाया जाता है वहाँ पर इसका व्यास 1 इंच होता होता और अंतिम सिरे में जाते–जाते इसका व्यास 5 इंच तक हो जाता है, इसको बजाते समय पहले जमीन की ओर और बाद में आसमान की ओर मुंह किया जाता हैं, इसे "भोंकर" भी कहा जाता है क्योंकि इसमें से "भौ–भा" की ध्वनि निकलती है, कुमाऊँ में सभी जगह पूजा–अर्चना में इसका प्रयोग किया जाता है, देवालयों में कभी भी एक "भौकर" नहीं रखा जाता हमेशा जोड़े में इसे रखा जाता है, स्थानीय लोक जनुश्रुतियों में मान्यता है कि भोंकर का प्रयोग भोटियों द्वारा भी किया जाता है वे इसे थुन्चेन कहते हैं।

(8) बांसुरी –

कुमाऊँ में बासुंरी का प्रयोग भी व्यापक मात्रा में होता है ग्वाल बाले जब पशुधन को चारा खिलाने जाते हैं तो वहाँ पर बांसुरी को ले जाते हैं तथा उसकों वहाँ बजाते हैं चरवाहों के पशुधन खो जाते हैं तो मधुर बांसुरी की आवाज पर वे सब एक जगह एकत्रित हो जाते हैं, द्वापर युग में भगवान श्री कृष्ण ने भी बांसुरी को बजाकर सारे बहुत सारी लीलाऐं रचाई मथुरा के लोग श्रीकृष्ण की बांसुरी को सुनकर दौड़े चले आते थे, कुमाऊँ के लोकगीतों में जब बांसुरी का प्रयोग किया जाता है तो गीत में काफी सुर आ जाता है। लोक गीतकार "गोपाल बाबू गोस्वामीजी" का गीत जो कुमाऊँ में काफी चर्चित है।

"कैले बाजी मुरूली बैणा ऊँचा ऊँचा डाल्यू में को पापी लमेंरो बैणा मन दखै है छा"

(9) शंख–

कुमाऊँ में शंख का बड़ा महत्व है, यहाँ के धार्मिक कार्यक्रमों में इसे सर्वत्र बजाया जाता है। किसी भी धार्मिक कार्य की शुरूआत इसके बजाने से ही आरंभ होती है और कार्य का समापन इसको बजाने और माँ के जयकारे के साथ होती है। कुमाऊँ क्षेत्र में इसकों धार्मिक विधि विधानों के अलावा चिकित्सकीय कार्यों में भी प्रयोग किया जाता है जब किसी बच्चे की जुबान उसके शारीरिक विकास के साथ–साथ पूर्ण रूप से नहीं खुली हो लाटा हो तो उस बालक को शंख का पानी दिया जाता हैं। और कमल के पत्ते में भी पानी पिलाया जाता है ऐसा करने से उसकी जुबान खुल जाती है, कुमाऊँ के कई घरों में दो मुखी तीन मुखी शंख आज भी हैं।

(10) नगाड़ा दमुवा दैन –

"यह कुमाऊँ के समस्त धार्मिक कार्यों में बजाया जाने वाला मुख्य पारंपरिक वाद्य यंत्र है, आकार में यह दमाई से बड़ा होता है"[15] जो गर्जना के साथ बजता है इसकी आवाज ढोल की तरह आती है। इसको दैन इसलिए कहा जाता है क्योंकि इसको दक्षिणवर्ती बजाया जाता है। यह अष्टधातु और तांबे के मिश्रण से बनाया जाता है, व्यास में यह दमुआ से बड़ा होता है, इसमें भैंसे की खाल की मढ़ाई की जाती हैं जब भेंसे की खाल ना हो तो अजखाल का प्रयोग किया जाता है। इसके निर्माण में किसी अन्य जानवर की खाल का प्रयोग नहीं किया जाता, गर्जना को उचित रखने के लिए इसके पूड़े पर घी की लिपाई की जाती है, इसे सेटो से बजाया जाता है जो पहिये या तिमिले की मोटी लकड़ी के बने होते हैं, कुमाऊँनी लोक कलाकारों का मानना है कि इसमें भेंसे और अजखाल का प्रयोग इसकी शुद्धता को सुनिश्चित करने के लिए भी किया जाता है।

(11) खांकर/घान/घण्टी –

घंटियों का कुमाऊँ क्षेत्र में बड़ा महत्व है, यहाँ के सर्वत्र मंदिरों में घंटियों को चढ़ाया जाता है लोकजनश्रुतियों में मान्यता है कि घंटियाँ चढ़ाने से देवता प्रसन्न हो जाते हैं तथा भक्तों की मनौती को पूरा करते हैं। घोड़ाखाल के गोलू देवता, अल्मोड़ा जनपद के चितई गोलू जी कोटगाड़ी मंदिर आदि में न्याय की गुहार लगाई जाती है तथा उचित न्याय मिलने पर घंटियों को चढ़ाया जाता है, घोड़ाखाल, चितई देवता के मंदिर में सुबह शाम घंटियों की ध्वनियों से समस्त वातावरण भक्तिमय हो जाता है, घरों में भी शुभ कार्यक्रम पूजा–पाठ आदि में घंटियों का प्रयोग सर्वत्र किया जाता है,

ये ताँबे और काँसे के बने होते हैं, इनके अन्दर लोहे की मुंगरी लगी हुई है जो हिलाने पर लोहे पर टकराती है और काफी मधुर आवाज निकलती है।

(12) मिजुरा –

"यह भी कुमाऊँ क्षेत्र का प्राचीनतम वाद्य यंत्र है इसका प्रयोग सामाजिक और सांस्कृतिक धार्मिक कार्यक्रमों में किया जाता है"[16] शादी–विवाह, महफिल, भजन कीर्तन, होली में मेले कौतिक आदि में इसका प्रयोग किया जाता है, यह आकार में झांझर से छोटा होता हैं, यह जोड़े में प्रयुक्त होता है शिखर भनार के मेले में इसका प्रयोग किया जाता है।

(13) डंगर/डौर –

इसे कुमाऊँनी जागरों में सर्वत्र बजाया जाता है, यह आकार प्रकार में डमरू से मिलता जुलता वाद्य यंत्र है, इसको एक ओर से हाथ एवं दूसरी ओर सेटे से बजाया जाता है, कुमाऊँनी देवी देवताओं की जागरों में इसका प्रयोग सर्वत्र किया जाता है, इसके निर्माण में खमिर की लकड़ी का प्रयोग किया जाता है, इसके दोनों ओर अज, घुरण, मृग, काकड़ की खाल का प्रयोग किया जाता है, स्थानीय लोक जागरों में जनश्रुति है कि डौर भगवान शिवजी के डमरू का ही एक रूप है।

(6) लोक गायन परंपरा

(क) शकुन आखर गीत – कुमाऊँ में मांगलिक कार्यों में विशेष रूप से शगुन–आखर व न्यूतणों की परंपरा निभाई जाती है, जोहार भोट क्षेत्र में इसे 'सोगुना' कहा जाता है, इसमें शकुन के लिए प्रार्थना का आयोजन किया जाता ताकि सभी कार्य सिद्ध हो सके।

शगुनाखर आज भी कई घरों में गाये जाते हैं, बालक जन्म, छटी, नामकरण, यज्ञोपवीत तथा वैवाहिक गीतों को नारीकंठ के गीत भी कहा जाता है, विभिन्न मांगलिक कार्यों में कुमाऊँ की महिलाओं के मुंह से ये गीत सुने जा सकते हैं, नारी हृदय की कोमलता, निश्छल खुशी इन गीतों में परिलक्षित होती हैं, जीवन की उमंग उल्लास, करूणा, यथार्थ तथा कल्पना का अनोखा रूप इन गीतों में देखने को मिलता है, प्रत्येक शुभ कार्य के आरम्भ में शगुन गीत गाये जाते हैं।

वैदिक युगीन सोलह संस्कारों में कुमाऊँ में व्यवहारिक रूप से 5 संस्कार संपन्न किये जाते हैं, नामकरण, अन्नप्रासन, उपनयन विवाह अंत्येष्टि अंतिम संस्कार के अलावा चारों संस्कारों के अवसर पर कुमाऊँ की मातृशक्ति द्वारा गीतों को गाया जाता है, इनको गाने वाली महिलाओं को गिदार कहा जाता है। कुमाऊँ में जन्म के ग्यारहवें दिन राशि, लग्न व नक्षत्र का विचार करके शिशु का नामकरण संस्कार किया जाता है, शिशु को प्रथम बार सूर्य के दर्शनार्थ बाहर ले जाते समय महिलायें इस गीत को गाती हैं। छटे या आठवे माह में शिशु को भोजन कराया जाता है, जिसे अन्नप्राशन संस्कार कहा जाता है, कुमाऊँ में अन्न्प्रासणी कहा जाता है। इस अवसर पर पकवानों से सम्बन्धित गीत गाये जाते हैं।

"उपनयन संस्कारों को शिक्षा के लिए बनाया गया है। कुमाऊँ में इस संस्कार को बरपन्द कहा जाता है"[17] इस संस्कार में गीतों के माध्यम से काशी भेजना, शिक्षा ग्रहण करना, परिवारजनों से भिक्षा मांगना आदि के विषय में जानकारी देना शामिल है।

विशेष संस्कारों से संबंधित गीत कुमाऊँ में जन्म व्रत और विवाह के अवसरों से संबंध रखते हैं, जन्म संबंधी गीत कुमाऊँ में पाँच प्रकार के होते हैं।

(1) जन्मदिन के गीत –

बालक के जन्म के अवसर पर ये गीत गाये जाते हैं

(2) छटी के गीत –

बालक के जन्म के छटे दिन गाये जाते हैं,

(3) अन्न प्रासनी के गीत –

बच्चों के अन्न खिलाने के दिन ये गीत गाये जाते हैं, कन्याओं को पांचवे महीने तथा बालकों को छटे महिने खाना खिलाया जाता है,

(4) नामकरण के गीत –

ये गीत नामकरण के दिन बालक के जन्म के ग्यारहवें दिन गाये जाते हैं,

(5) जनमवार के गीत

ये गीत प्रत्येक जन्मदिन पर गाये जाते हैं, जिनमें बच्चों को आर्शीवाद दिया जाता हैं।

(ख) न्यौलि –

कुमाऊँ में यह एक गायन पद्धति है, 'न्यौली' एक मादा पक्षी है, जो काली होती है। अपने प्रियतम की तलाश में वह घने जंगलों में विचरण करती है, इसी भावना से इन गीतों को 'न्यौली' नाम दिया गया इसका अर्थ नवेली–नवअवली नये गीतों की अवली' और नवेली अर्थात् नये छंदों की मौलिक आशु कविता 'नवेली व मामिनी को आलंबन मानकर गाये जाने वाले गीत सार्थक एवं संगत प्रतीत होते हैं।

(ग) चाँचरी –

इसका मूल शब्द 'चर्चरी' है जो संस्कृत का शब्द है जिसका अर्थ है नृत्य ताल समन्वित गीत, यह कुमाऊँनी गीतों की एक विशिष्ट शैली है, दानपुर नाकुरी आदि क्षेत्रों में इसका विशेष प्रचलन है, अल्मोड़ा, सालम, सोमेश्वर आदि क्षेत्रों में इन गीतों को 'झोड़' और भैनी भ्वैनी कहते हैं, पिथौरागढ़ जनपद में इसे 'खेल' कहा जाता है, भैनी का तात्पर्य भणिति से है और खेल शब्द में नृत्य की स्पष्ट अर्थ प्रतीति है, चाँचरी में प्रायः आद्यन्त आवृतियाँ पायी जाती है,

कुमाऊँनी लोकगीतों में छोड़ा, छपेली, चांचरी आदि के मूल में न्यौली और जोड़ रहते हैं, विविध आवृत्ति प्रयोगों से इन गायन–पद्धतियों के शिल्प का निर्माण होता है।

(घ) झोड़ा –

"इसका मूल शब्द 'जोड़ा' होता है कुमाऊँनी में ज ध्वनि झ में सुगमता से परिवर्तित हो जाती है"[18] अनेक शब्दों में इसे सयुंक्त रूप से उच्चारित किया जाता है, जान, झान, जन, झन आदि नेपाल और कुमाऊँ में अनेक जगह झोड़ा के लिए हथजोड़ा शब्द का भी प्रयोग होता है, अतः "झोड़ा से तात्पर्य जोड़े बनाकर अथवा हाथ जोड़कर गाये जाने वाले गीत, इन गीतों में दो दल होते हैं। और अनेक व्यक्ति एक दूसरे का हाथ पकड़कर दो भागों में बंट जाते हैं, गायन के लिए हाथ जोड़कर दो दलों द्वारा गाये जाने वाले गीत झोड़ा कहलाते हैं, इस प्रकार झोड़ा जोड़ा शब्द गीत शैली की विशिष्टता को
स्पष्ट करता है।

(ङ) छपेली –

छपेली शब्द छप् संस्कृत 'क्षप' क्षिप्र में कुमाऊँनी प्रत्यय 'एली' के योग से निर्मित हुआ है छप् या क्षप् का तात्पर्य – क्षेपण या 'क्षिप्र–गति' अर्थात 'छपेली' से तात्पर्य हुआ – क्षिप्र गति में गाये जाने वाले नृत्य गीत, विषय वस्तु और प्रसंग के आधार पर 'छपेली' नाम प्रक्षेपण एवं नृत्य की गति के अर्थ में संदर्भित एवं सटीक है। विवाह, उत्सव, मेलों, में इनका आयोजन किया जाता है, इसमें एक मुख्य गायक होता है। एक नृतक समूह होता है, पूर्व में नृतकि स्त्री होती थी कालांतर में स्त्री का वेश पुरूषों ने ले लिया है, मुख्य गायक हुडुका भी बजाता है, नाचने वाले अपने अंग–संचालन और भाव भंगिमाओं से गीत की मूल भावना को अभिनय कौशल द्वारा व्यक्त करता हुआ नृत्य करता है।

(च) बौर –

"इसका शब्दिक अर्थ द्वन्द्व संघर्ष होता है, गायकों के बीच गीतात्मक शैली में होने वाले वाक्–युद्ध को बौर कहते है"[19] इनमें स्वपक्ष और परपक्ष एक दूसरे का खण्डन करके एक दूसरे को पराजित करते हैं, यह प्रश्नोत्तरी शैली में होता है, उत्सव, मेलों आदि में गायकों द्वारा इसे गाया जाता है, इसे देखने के जनसमूह भी इकट्ठा होता है। इसमें बैरिये एक दूसरे से प्रश्न पूछते हैं जो उत्तर नहीं दे पाते वह पराजित हो जाते है। ये प्रश्न, दुरूह, गूढ़, बिम्बात्मक, प्रतीकात्मक उक्ति वैचित्रपूर्ण होते हैं, प्रश्न पूछने का ढंग प्रायः असमान्य होता है। यह एक तर्कप्रधान गीत शैली है।

(छ) फाग –

यह कुमाऊँ के विभिन्न संस्कारों के अवसरों पर गाये जाने वाले मंगलगीत हैं, इन गीतों का संस्कारों से संबंध होने के कारण इन्हें संस्कार गीत भी कहा जाता है। कुमाऊँ में इन्हें शकुन आखर गीत भी कहा जाता है, पुत्र जन्म, षष्ठी, नामकरण, व्रतबंध, विवाह, आदि संस्कारों के अवसरों पर इन शकुनआखर गीतों को गाया जाता है। इन गीतों में अवधी और ब्रज का प्रभाव अधिक है, कुछ शकुनगीत कुमाऊँनी में भी मिलते हैं, फाग के अन्तर्गत इन गीतों को शामिल नहीं किया गया है, इन्हें केवल स्त्रियाँ ही गाती है, इनमें गीतात्मकता और स्वर का विशेष महत्व होता है, "फाग गीतों को गाने में दो या दो से अधिक गायिकाएँ होती है"[20]

लोक वाद्य यंत्र एवं लोक गायन परंपराओं का संस्कृति संरक्षण में योगदान –

कुमाऊँ में वाद्य यंत्रों और लोकगायन परंपरा का अलग ही महत्व है। कुमाऊँ में लोकवाद्य यंत्र कुमाऊँनी संस्कृति के ध्वजवाहक है, प्रत्येक प्रकार की सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक गतिविधयों में इनका प्रयोग सर्वत्र किया जाता है, इन गतिविधियों में समाज के सभी लोग शामिल होते हैं, जो कुमाऊँनी जनमानस के एकता का भी प्रतीक हैं। धार्मिक कार्यो के साथ ही जागरों में हुडुके का प्रयोग किया जाता है, जो महादेव के डमरू का ही एक स्वरूप है, और समाज के सभी वर्गों द्वारा इसका प्रयोग किया जाता है, जो सामाजिक एकता और एक समान संस्कृति की अवधारणा को परिलक्षित करता है। लोक गायन परंपरा का एक सुदीर्ध इतिहास रहा है। कुमाऊँ में वर्ष भर तीज त्यौहारों और धार्मिक उत्सवों का आयोजन किया जाता है, इन आयोजनों में हम कुमाऊँ की लोक गायन परंपरा को स्पष्ट रूप से देख सकते हैं, इन सभी धार्मिक कार्यकलापों और आयोजनों में समाज के सभी वर्गो द्वारा साथ में इन लोकगीतों को गाया जाता है, और ये लोकगायन परंपरा कुमाऊँनी जनमानस को एकसूत्र में पिरोने का कार्य करते है। साथ ही संस्कृति संरक्षण के कार्य को भी निवर्हन करने का कार्य कर रहे हैं।

संदर्भ

1. इन्द्रा देवी 75: वर्ष साक्षात्कारः ग्रामः गोगिना बागेश्वर, 04/05/2019 समय 7 पीएम
2. रूद्रेश्वर महादेव मंदिर जीर्णोद्धार समिति' रिपोर्ट ग्राम सनणा, जनपद अल्मोड़ा
3. नवीन चन्द्र उम्र 55 वर्ष साक्षात्कार ग्राम दिनांक 11/06/2020 समय 8 पीएम
4. भगवंत लाल उम्र 39 वर्ष साक्षात्कार ग्राम हवालबाग अल्मोड़ा दिनांक 23/06/2020 समय 7 पी.एम.
5. महंत देवानंद दास 70 वर्ष साक्षात्कारः तप्त कुण्ड बागेश्वर, 07/07/2019 समय 2 पी.एम.
6. कमल कोरंगा उम्र 35 वर्ष साक्षात्कार बागेश्वर दिनांक 12/03/2020 समय 7 पी.एम.
7. हरीशलाल उम्र 75 वर्ष साक्षात्कार ग्राम व पोस्ट मेहरागाँव दिनांक 05/08/2019 समय 8 पीएम.
8. पूर्वोक्त साक्षात्कार इन्द्रा देवी
9. देवी लाल 79 वर्ष, साक्षात्कार ग्राम व पोस्ट मेहरागाँव दिनांक 27/05/2019 समयः 6 पीएम.
10. टीकम सिंह उम्र 67 वर्ष साक्षात्कार ग्राम मेहरागाँव दिनांक 14/04/2021 समय 6 पी.एम.

11. मोहन सिंह गढ़िया 71 वर्ष साक्षात्कार पूर्व प्रधानाचार्य शाम ग्रामः पोथिंग बागेश्वर, 06/07/2019 समय 6 पी.एम.
12. मोहन चन्द्र जोशी 67 वर्ष साक्षात्कार ग्राम कलांग बागेश्वर, 05/07/2021 समय 5 पी.एम.
13. जोशी, ज्वाला दत्त, लधौनधुरा शिव मंदिर आलेख पृष्ठ 52–53
14. शेर सिंह धपोला, 92: वर्ष साक्षात्कार बागेश्वर, 04/07/2019 समय 5 पी.एम
15. पूर्वोक्त साक्षात्कार मोहन सिंह गढ़िया
16. कुमार राजेश उत्तराखण्ड हिमालय में सतत् आर्थिक विकास एव नियोजन रिसर्च इंडिया प्रेस, नई
17. पूर्वोक्त साक्षात्कार टीकम सिंह
18. पद्म सिंह कोरंगा, 66 वर्ष साक्षात्कारः ग्रामः नौकोड़ी, बागेश्वर, 05/04/2018 समय 2 पी.एम.
19. पूर्वोक्त, तिवारी, डा. मोहन चन्द्र पृष्ठ 108
20. बसंत बल्लभ पाठक 87 वर्ष साक्षात्कार ग्राम दशौली पांखू पिथौरागढ़ 04/05/2020 समय 4 पी.एम.